

RELATION IN AYURVEDA, YOGA AND PRAKRITIK CHIKITSA; A REVIEW**Dr. Shaveta Arora*¹, Dr. Veenu Malhotra (M.D, Phd)²**¹PG Scholar Deptt of Maulik and Siddhanta.²H.O.D. and Professor in Deptt of Maulik and Siddhanta.

Babe ke Ayurvedic Medical College, Guru Ravidas Ayurved University, Hoshiarpur, Punjab.

Article Received on
12 October 2021,Revised on 01 Nov. 2021,
Accepted on 22 Nov. 2021

DOI: 10.20959/wjpr202114-22407

Corresponding Author*Dr. Shaveta Arora**PG Scholar Deptt of Maulik
and Siddhanta.**आयुर्वेद, योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा में समन्वय-सार-**

- मनुष्य जीवन का सर्वोपरि उद्देश्य चारों पुरुषार्थों को अर्थात् धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष को प्राप्त करना है, जिसका वास्तविक साधन और आधार स्वस्थ शरीर है।^[1]
- स्वास्थ्य की रक्षा करने के उपाए बताते हुए आयुर्वेद, योग व प्राकृतिक चिकित्सा की विधियाँ सर्वांगीण हैं अर्थात् ये शरीर की शारीरिक एवं मानसिक दोनों अवस्थाओं में उपयोगी हैं, ये न केवल रोगों की चिकित्सा करते हैं बल्कि शरीर की व्याधि क्षमता को बढ़ाकर, रोगों की उत्पत्ति में रोधक भी हैं अर्थात् इनमें उपचार की तुलना में स्वास्थ्य वर्धन पर अधिक महत्व दिया जाता है, फलस्वरूप आयु की कामना हेतु, इनका अध्ययन आवश्यक है।
- आयुर्वेद शरीरेन्द्रियसत्त्वात्मसंयोग रूप जीव के स्वास्थ्य परीक्षण तथा व्याधि के निदान,

लिंग तथा चिकित्सा का दायित्व लेकर चलता है, वहीं योग सिद्धान्ततः सत्त्व तथा चेतना का विज्ञान है तथा प्राकृतिक चिकित्सा के अन्तर्गत शुद्ध वायु और सूर्य की किरणें प्राकृतिक रूप से संक्रामक जीवाणुओं को नष्ट करते हैं और उनके वृद्धि व प्रसार को रोकते हैं।

प्रस्तावना—वर्तमान समय अर्थात् आधुनिक युग में योग, आयुर्वेद एवं प्राकृतिक चिकित्सा के महत्त्व में और अधिक अभिवृद्धि हुई है, इसका प्रमुख कारण मनुष्यों में बढ़ती व्यस्तता एवं मन की व्याकुलता है।

आयुर्वेद, योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा का परस्पर सम्बन्धित ज्ञान

- आयुर्वेद अनुसार शरीर, इन्द्रियाँ, सत्त्व, आत्मा के संयोगको 'आयु' कहते हैं^[2] तथा योग के अभ्यास से व्यक्ति को मन (सूक्ष्म शरीर), शरीर (स्थूल शरीर) और आत्मा को नियंत्रित करने में मदद मिलती है, यह भौतिक और मानसिक संतुलन द्वारा शान्त मन और संतुलित शरीर की प्राप्ति कराता है, तनाव और चिंता का प्रबंधन करता है^[3], वहीं प्राकृतिक चिकित्सा अनुसार मनोदैहिक इकाई, नानाविध बहि तथा आभ्यन्तरक्लेशों के प्रभाव के अतिरिक्त, धातुसाम्य बनाये रखने में प्रयत्नशील रहती है फिर भी क्लेश-प्रभाव से मनोदैहिक विक्षेप उत्पन्न होते रहते हैं, जो ह्रास होने पर स्वतः नष्ट हो जाते हैं।^[4]
- योगसूत्र में नियम के अंतर्गत पाँच भेदों (शोच, संतोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्रणिधान) का अनुशासन, व्यक्तिगत उत्कर्ष के साथ सामाजिक उत्थान को सुनिश्चित करता है। स्वास्थ्य का मूल मन्त्र धर्म है। धर्म अर्थात् प्रकृति के

अनुकूल या उनके नियमानुसार चलना। प्रकृति के सभी नियम इस संसार या विश्व को धारण करने हेतु ही बने हैं और इसी कारण इनमें कोई परिवर्तन नहीं होता, उदाहरण स्वरूप—सूर्य समय पर ही निकलता व डूबता है, सूर्य पूर्व दिशा में नहीं डूबता है। आयुर्वेद अनुसार दोषज व्याधियाँ मिथ्या आहार—विहार से उत्पन्न होती हैं।^[5] मिथ्या आहार—विहार से तात्पर्य प्रकृति के नियमों पर न चलना है।

- असंतोष को आयुर्वेद कष्ट का प्रमुख कारण मानता है।^[6] योग अनुसार, संतोष सर्वोत्तम सुख है, इससे उत्तम दुनिया में कोई भी सुख नहीं है। चाह रहित होना अनंतसुख देता है, ऐसी पतंजलि की मान्यता है।⁷ क्लेशमुक्त होना व्यक्तिको शान्ति देता है, यह आयुर्वेद की मान्यता है।
- योगसूत्र अनुसार तप के प्रभाव से जब अशुद्धि नष्ट हो जाती है, तब शरीर और इंद्रियों की सिद्धि हो जाती है। आयुर्वेद में आचार रसायन प्रसंग में कहा गया है कि प्रतिदिन जप, शौच, दान एवं तप का अभ्यास करें तथा देवता, ब्राह्मण, आचार्य एवं गुरु की सेवा में निरत रहें।^[8] प्राकृतिक चिकित्सा में भी मानसिक चिकित्सा अन्तर्गत शान्त, पवित्र व मनोऽनुकूल वातावरण से स्वास्थ्य लाभ का वर्णन मिलता है।^[9]
- योगसूत्र अनुसार ईश्वर प्रणिधान से समाधि की सिद्धि प्राप्त हो जाती है। आयुर्वेद में मानस दोषों के निवारण के लिए ईश्वर का ध्यान करने की चिकित्सा बताई गयी है तथा ज्वर चिकित्सा में भी आचार्य चरक ने विष्णु सहस्र नाम पाठ के जाप का उल्लेख कर ईश्वर की शरण में जाने को कहा है।^[10] वहीं प्राकृतिक चिकित्सा में प्रार्थना करना चिकित्सा का एक आवश्यक अंग माना गया है।
- आयुर्वेद के समान ही प्राकृतिक चिकित्सा में उपवास एक प्रमुख चिकित्सीय विधि है।^[11] योग साधना अन्तर्गत भी यौगिक क्रिया करने से पहले व उपरान्त उपवास का उपदेश दिया गया है, क्योंकि मनुष्य जो भी आहार सेवन करता है, वह कुछ समय के लिये आमाशय में अवश्य रुकता है।
- आयुर्वेद में योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा की भाँति व्यायाम का उपदेश दिया गया है।^[12] यथा— ऐसी शारीरिक चेष्टायें जो शरीर एवं मन को स्थैर्य एवं बल प्रदान करें, व्यायाम कहलाती हैं।^[13] व्यायाम से शरीर बलिष्ठ एवं सुसंगठित होता है तथा कष्ट सहने की शक्ति प्राप्त होती है, आसनों से शारीरिक एवं मानसिक विश्रान्ति मिलती है।^[14]
- आयुर्वेद, योग व प्राकृतिक चिकित्सा तीनों ही 'स्वभावोपरमवाद' में विश्वास रखते हैं तदनुसार प्रकृति ही स्वभाव है, विकृति नहीं। अतः एव व्यक्ति स्वभावतः ही विकृति से प्रकृति की ओर अग्रसर होता है। स्वस्थ रहना स्वभाव है। रोग के हेतु का स्वतः निराकरण होते रहना 'स्वाभाविक प्रक्रिया' है, यही चरकोक्त 'स्वभावोपरमवाद' के सिद्धान्त का तात्पर्य है।
- प्राकृतिक चिकित्सा का सर्व भौम सिद्धान्त है—पंचमहाभूतों से चिकित्सा। जीव शरीर पंचमहा भूतों से बना है।^[15] मनुष्य जो आहार ग्रहण करता है, वह भी पंचभौतिक है अतएव प्राकृतिक चिकित्सा में मिट्टी, जल, अग्नि, वायु आदि के माध्यम से ही चिकित्सा की जाती है, वहीं आयुर्वेदिक साहित्य में शरीर के घटक पदार्थ दोष, धातु एवं मल कहे गए हैं, ये सभी पंचमहाभूतों से बने हैं। जैसे—वायु एवं आकाश महाभूत से—वात दोष की उत्पत्ति।^[16] वहीं योग शास्त्र अन्तर्गत प्रातः काल, स्वच्छ वायु में ज़मीन पर सूर्य नमस्कार कर, सूर्य को जल चढ़ाने को अति लाभदायक बताया गया है।
- प्राकृतिक चिकित्सा का एक महत्वपूर्ण अंग योगाभ्यास सभी है। मनुष्य को प्रकृति के नज़दीक ले आने के क्रम में मानसिक शुद्धि अथवा मानसिक परिवर्तन अतीव महत्वपूर्ण भूमिका रखता है। मानसिक सद्वृत्ति योगाभ्यास से ही सम्भव है। मन को नियंत्रित करने हेतु किये गए प्रयासों को योगाभ्यास कहते हैं।

—यौगिक अभ्यास एवं यौगिक चिकित्सा अलग-अलग तथ्य हैं। योगाभ्यास का अर्थ है, यौगिक सोपानों (यम, नियम आदि) को सफलता पूर्वक अमल में लाना एवं साधन-विभूति-समाधि पादक्रम से कैवल्य प्राप्त करना, यही जीवन का अंतिम लक्ष्य कहा गया है। यौगिक चिकित्सा अर्थात् योगासनों एवं योग सोपानों के माध्यम से आतुर अथवा स्वस्थ का मानसिक एवं कायिक परिवर्तन।^[17]

आयुर्वेद अनुसार योगाभ्या सभी दिनचर्या का अंग होना चाहिए। प्रतिदिन प्राणायाम, सूर्योपासना एवं गायत्री जप तथा इष्ट देव अर्चना करनी चाहिये तथा सद्वृत्त का पालन करना चाहिए।^[18]

- आयुर्वेद अनुसार मन, इन्द्रियों की अपेक्षा विशिष्ट शक्ति सम्पन्न है। जैसे-इन्द्रियाँ प्रतिनियत विषयक होती हैं (जैसे श्रवणइन्द्रिय काविषय शब्द), जब कि मन के विषय नियत नहीं हैं, वेसी मातीत और त्रैकालिक हैं, इसके अतिरिक्त इन्द्रियाँ, मन के बिना किसी प्रकार अपने विषय का ग्रहण करने में समर्थ नहीं होती^[19] प्राकृतिक चिकित्सा अनुसार शरीर में स्वयं कोरोगों से बचाने व अस्वस्थ हो जाने पर पुनः स्वस्थ होने की क्षमता विद्यमान है, जिसके लिये मन का नियन्त्रित होना अति आवश्यक है।
- ज्ञान का तात्पर्य है शास्त्रों से या आचार्यों से आत्मा आदिपदार्थों का ज्ञान प्राप्त करना और विज्ञान का अर्थ है उस ज्ञातपदार्थ का उसी रूप में स्वयं अनुभव करना, इस प्रकार की अनुभूति सदा आनन्दमय मानी गयी है। ऋषियों ने इसी अनुभूति के लिए योगविज्ञान का आविष्कार किया था अर्थात् अनुभव युक्तज्ञान ही विज्ञान सहित ज्ञान है और वही योग है।^[20] वहीं आयुर्वेद का लक्ष्य ज्ञान प्राप्ति नहीं, अपितु विज्ञान प्राप्ति है। वेदान्त परम्परा में योग को स्वानुभूति का परम साधन माना गया है तथा प्राकृतिक चिकित्सा के अन्तर्गत प्रकृति व शरीर में सम्बन्ध का ज्ञान प्राप्त कर स्वयं प्रकृति को ही उपयोग में लाया जाता है।
- योगसूत्र में अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश इन पाँच क्लेशों को बंधन का कारण बताया गया है, इनसे मन में कालुष्य आता है, इसका निवारण चित्त शुद्धि है। आयुर्वेदज्ञ महीषियों ने भी इस विषय का सम्यक् निरूपण, इसी रूप में किया है तथा प्राकृतिक चिकित्सा की दृष्टि में रोगों का मूल कारण है-अनियमित दिनचर्या व शरीर के अन्दर जमा हुआ विजातीय पदार्थ। शरीर का शुद्धि करण किय बना कोई भी रोग ठीक नहीं हो सकता।
- आयुर्वेद में वैद्य की चार वृत्तियाँ बताई गयी हैं, इसे ही योगसूत्र में मैत्री, करुणा, मुदिता, उपेक्षा के रूपमें चित्त प्रसादन के लिए बताया गया है। मैत्री का अर्थ होता है, प्राणिमात्र के साथ मित्रता का व्यवहार करना। योगसूत्र के अनुसार मैत्री आदि से बल मिलता है तथा इसे संयम के लिए बताया गया है। आयुर्वेद में रोगी के रोग को दूर करने के लिए रोगी से मित्रता करने के लिए कहा गया है तथा प्राकृतिक चिकित्सा अन्तर्गत प्राकृतिक उपादानों से मित्रता कर स्वास्थ्य लाभ, रोगनिवारण तथा व्यक्ति के सद्भाव का भी निर्माण होने का उल्लेख है।^[21]
- उपेक्षा अर्थात् त्यागको आयुर्वेद चिकित्सा शास्त्र में असाध्य रोगों की उपेक्षा, चिकित्सा छोड़ने के रूप में लिया गया है, जबकि योग में राग, द्वेष, घृणा, ईर्ष्या, क्रोध के नाश के लिए प्राणियों में उपेक्षा की भावना को लिया गया है, यह सब अनासक्ति भावनायें हैं, वहीं प्राकृतिक चिकित्सा अन्तर्गत सभी कृत्रिम वस्तुओं की उपेक्षा का उपदेश उल्लेखित है।
- हठयोग एवं तंत्र शास्त्र में ६ प्रधान कर्म बताकर उसे षट्कर्म संज्ञा दी गयी है। ये कर्म प्रधानतया शोधन कर्म ही हैं। आयुर्वेद में शोधनकर्म के लिए पंचकर्म का उपयोग किया जाता है, साथ ही स्नेहन-स्वेदन-नस्य-धूम-गण्डूष-कवलग्रह आदि का उपयोग दोनों पद्धतियों में किया गया है। इन कर्मों का उपयोग भी स्वस्थ एवं आतुर दोनों के लिए किया जाता है तथा प्राकृतिक चिकित्सा के समर्थक खान-पान

एवंरहन-सहन की आदतों, शुद्धि कर्म, जल चिकित्सा, ठण्डीपट्टी, मिट्टी की पट्टी, विविध प्रकार के स्नान, मालिश तथा अनेक नई प्रकार की चिकित्सा विधियों पर विशेष बल देते हैं।

विमर्श

- आयुर्वेद तथा योग एक समान प्राचीन मानव हितकारी विद्याएँ हैं। जहाँ आयुर्वेद एक ओर त्रिसूत्री शास्त्र के रूप में विकसित शरीरेन्द्रिय सत्त्वात्म संयोग रूप, जीव के स्वास्थ्य परीक्षण तथा व्याधि के निदान, लिंग तथा चिकित्सा का दायित्व लेकर चलता है, वहीं योग प्रथमतः सिद्धान्ततः सत्व तथा चेतना का विज्ञान है, यह तत्त्व ज्ञान तथा तत्त्व अनुभूति के अतिरिक्त आत्यन्तिक दुखनिवृत्ति तथा मोक्ष प्रवर्तक विद्या तथा विधि है और प्राकृतिक चिकित्सा एक चिकित्सा पद्धति नहीं अपितु जीवन जीने की कला है जो हमें आहार, निद्रा, सूर्यप्रकाश तथा सकारात्मकता का समुचित ज्ञान कराती है।
- प्राकृतिक चिकित्सा प्राण तत्त्ववाद और लोकचिकित्सा पर आधारित है, न कि प्रमाण पर तथा इसके अंतर्गत रोगाणुओं से लड़ने की शरीर की स्वाभाविक शक्ति ही रोगों का उपचार व स्वास्थ्य लाभ का आधार है तथा आत्मा को परमात्मा से मिलाने की क्रियाही योग कहलाती है। आयुर्वेद द्वारामनुष्य दिनचर्या, ऋतुचर्या, रात्रिचर्या, रसायनचिकित्सा, सद्वृत्तपालन, योगाभ्यास एवं त्रयोपस्तम्भ (आहार, निद्रा, ब्रह्मचर्य) का सम्यक पालन करके न सिर्फ शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक एवं भावनात्मक रूप से स्वस्थ रहता है, अपितु पूर्ण ऊर्जावान एवं रोगों से मुक्त होकर पूर्णायु का भोग करता है।^[22]
- आयुर्वेद के सिद्धान्तों के पालन से मनुष्य उत्तम स्वास्थ्य की प्राप्ति कर, चारों पुरुषार्थों को प्राप्त कर, परमानन्द में विलीन होजाता है अतः आयुर्वेद ऐहिक लोक के सुखों का मार्ग प्रशस्त कर परलौकिक सुख का भी दाता बन जाता है और अंत में 'निज स्वरूप आत्मा' का दिग्दर्शन या दर्शन कराता है। वहीं योग का शाब्दिक अर्थ—जुड़ना अर्थात् जीवात्मा का परमात्मा के साथ मिल जाना है, परन्तु स्थूल अर्थ लेना उचित नहीं प्रतीत होता, कारण यह है कि जीवात्मा और परमात्मा पृथक् वस्तु नहीं है, किन्तु चेतनत्वेन एक ही है। भेद तो अविद्याजन्य है तथा प्राकृतिक चिकित्सा से मनुष्य उत्तम स्वास्थ्य की प्राप्ति कर आरोग्य सुख भोगता है।

निष्कर्ष

- योग, आयुर्वेद तथा प्राकृतिक चिकित्सा एक ही प्रकार की ज्ञान पद्धतियाँ हैं और उनका दूरगामी उद्देश्य पूर्ण मानव कल्याण है। आयुर्वेद की संहिताएँ शारीरिक रोगों के लक्षण एवं उनकी चिकित्सा के साथ-साथ मनो-आध्यात्मिक भावों का भी विवेचन करती हैं, जबकि योग केवल मनो-आध्यात्मिक पक्षों पर ही विशिष्ट विचार करता है तथा प्राकृतिक चिकित्सा अर्न्तगत शरीर के पंचतत्त्वों के असंतुलन को प्राकृतिक आहार-विहार, नित्य व्यायाम आदि से पुनः संतुलित किया जाता है।
- आज अनेक तरीकों से योग, आयुर्वेद एवं प्राकृतिक चिकित्सा को विस्तारित कर, इन्हें मानवीय अस्तित्व के उपयोग में लाया जा रहा है। मन पर नियंत्रण करने की बात उसमें मुख्य रूप से परिलक्षित है।

ग्रंथसूची

1. अग्निवेश, चरकसंहिता, चरकदृढबलप्रतिसंस्करता, श्रीचक्रपाणिदत्तरचितआयुर्वेददीपिका, वैद्य आचार्य यादवजी त्रिकम जी द्वारासंशोधित, चौखम्बासुरभारतीप्रकाशन, वाराणसी, 2009।च.शा. १/१३७।
2. अग्निवेश, चरकसंहिता, चरकदृढबलप्रतिसंस्करता, श्रीचक्रपाणिदत्तरचितआयुर्वेददीपिका, वैद्य आचार्य यादवजी त्रिकम जी द्वारासंशोधित, चौखम्बासुरभारतीप्रकाशन, वाराणसी, 2009।च.वि. ३/७।

3. श्री शंकर, भगवतकृत-पातंजल योग शास्त्र- (सूत्र भाष्य)- विवरणम्, के. यो. ए. प्राचि. अ. प, दिल्ली, 2007।
4. शाहछोटालालजीवनलाल, प्राकृतिकचिकित्सा, बम्बईवैभवप्रेस, बम्बई, 1963।
5. प्रो.रामहर्ष सिंह, स्वस्थवृत्तविज्ञान, चौखम्बासंस्कृतप्रतिष्ठान: दिल्ली; पुनर्मुद्रितसंस्करण 2012।
6. कविराजडॉअम्बिकादत्तशास्त्री, सुश्रुतसंहिता, चौखम्बासंस्कृतसंस्थान, वाराणसी, पुनर्मुद्रितसंस्करण 2015।च.चि. २४/५७-५८।
7. श्री शंकर, भगवतकृत-पातंजल योग शास्त्र- (सूत्र भाष्य)- विवरणम्, के. यो. ए. प्राचि. अ. प, दिल्ली, 2007।योगसूत्र २/४२-४३।
8. अग्निवेश, चरकसंहिता, चरकदृढबलप्रतिसंस्करता, श्रीचक्रपाणिदत्तरचितआयुर्वेददीपिका, वैद्य आचार्य यादवजी त्रिकम जी द्वारासंशोधित, चौखम्बासुरभारतीप्रकाशन, वाराणसी, 2009।च.सू. ७/४८।
9. शाहछोटालालजीवनलाल, प्राकृतिकचिकित्सा, बम्बईवैभवप्रेस, बम्बई, 1963।
10. अग्निवेश, चरकसंहिता, चरकदृढबलप्रतिसंस्करता, श्रीचक्रपाणिदत्तरचितआयुर्वेददीपिका, वैद्य आचार्य यादवजी त्रिकम जी द्वारासंशोधित, चौखम्बासुरभारतीप्रकाशन, वाराणसी, 2009।
11. कविराजडॉअम्बिकादत्तशास्त्री, सुश्रुतसंहिता, चौखम्बासंस्कृतसंस्थान, वाराणसी, पुनर्मुद्रितसंस्करण 2015।सु.चि. २४/४६-४७।सु.चि. २४/८०।व अग्निवेश, चरकसंहिता, चरक दृढबल प्रतिसंस्करता, श्रीचक्रपाणिदत्तरचितआयुर्वेददीपिका, वैद्य आचार्य यादवजी त्रिकम जी द्वारासंशोधित, चौखम्बासुरभारतीप्रकाशन, वाराणसी, 2009। च.सू. २२/६, च.सू.२२/१८।
12. अग्निवेश, चरकसंहिता, चरकदृढबलप्रतिसंस्करता, श्रीचक्रपाणिदत्तरचितआयुर्वेददीपिका, वैद्य आचार्य यादवजी त्रिकम जी द्वारासंशोधित, चौखम्बासुरभारतीप्रकाशन, वाराणसी, 2009। च.सू.७/३१।
13. अग्निवेश, चरकसंहिता, चरकदृढबलप्रतिसंस्करता, श्रीचक्रपाणिदत्तरचितआयुर्वेददीपिका, वैद्य आचार्य यादवजी त्रिकम जी द्वारासंशोधित, चौखम्बासुरभारतीप्रकाशन, वाराणसी, 2009। च.सू. ७/३६,
14. अग्निवेश, चरकसंहिता, चरकदृढबलप्रतिसंस्करता, श्रीचक्रपाणिदत्तरचितआयुर्वेददीपिका, वैद्य आचार्य यादवजी त्रिकम जी द्वारासंशोधित, चौखम्बासुरभारतीप्रकाशन, वाराणसी, 2009। च.सू.८/१७।
15. अग्निवेश, चरकसंहिता, चरकदृढबलप्रतिसंस्करता, श्रीचक्रपाणिदत्तरचितआयुर्वेददीपिका, वैद्य आचार्य यादवजी त्रिकम जी द्वारासंशोधित, चौखम्बासुरभारतीप्रकाशन, वाराणसी, 2009। च.सू. १/१५।
16. अग्निवेश, चरकसंहिता, चरकदृढबलप्रतिसंस्करता, श्रीचक्रपाणिदत्तरचितआयुर्वेददीपिका, वैद्य आचार्य यादवजी त्रिकम जी द्वारासंशोधित, चौखम्बासुरभारतीप्रकाशन, वाराणसी, 2009।च.सू. २८/६।
17. अग्निवेश, चरकसंहिता, चरकदृढबलप्रतिसंस्करता, श्रीचक्रपाणिदत्तरचितआयुर्वेददीपिका, वैद्य आचार्य यादवजी त्रिकम जी द्वारासंशोधित, चौखम्बासुरभारतीप्रकाशन, वाराणसी, 2009।च.सू. १/१५।
18. अग्निवेश, चरकसंहिता, चरकदृढबलप्रतिसंस्करता, श्रीचक्रपाणिदत्तरचितआयुर्वेददीपिका, वैद्य आचार्य यादवजी त्रिकम जी द्वारासंशोधित, चौखम्बासुरभारतीप्रकाशन, वाराणसी, 2009। च.शा. १/१४०-१४१।
19. अ. ह. सू. ३/४।
20. अग्निवेश, चरकसंहिता, चरकदृढबलप्रतिसंस्करता, श्रीचक्रपाणिदत्तरचितआयुर्वेददीपिका, वैद्य आचार्य यादवजी त्रिकम जी द्वारासंशोधित, चौखम्बासुरभारतीप्रकाशन, वाराणसी, 2009। च.सू. ६/२६।
21. अग्निवेश, चरकसंहिता, चरकदृढबलप्रतिसंस्करता, श्रीचक्रपाणिदत्तरचितआयुर्वेददीपिका, वैद्य आचार्य यादवजी त्रिकम जी द्वारासंशोधित, चौखम्बासुरभारतीप्रकाशन, वाराणसी, 2009। च.चि. १/४।
22. अग्निवेश, चरकसंहिता, चरकदृढबलप्रतिसंस्करता, श्रीचक्रपाणिदत्तरचितआयुर्वेददीपिका, वैद्य आचार्य यादवजी त्रिकम जी द्वारासंशोधित, चौखम्बासुरभारतीप्रकाशन, वाराणसी, 2009।च.सू.११/४३।